International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

विचार सागर में अधिकारी निरूपण

हेम चन्द्र

शोधछात्र

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

भारतीय आस्तिक दार्शनिक परम्परा में षड्दर्शन सांख्य-योग, न्याय-वैशेषिक, पूर्वमीमांसा तथा वेदान्त (उत्तरमीमांसा) सुविख्यात हैं । षड्दर्शन के अन्तर्गत वेदान्त सम्प्रदाय उपसम्प्रदायों में विभक्त है । यथा- अद्वैत,विशिष्टाद्वैत, द्वैताद्वैत इत्यादि । इन उपसम्प्रदायों में अद्वैतवेदान्त के प्रतिष्ठापक के रूप में शङ्कराचार्य का नाम बड़ी श्रद्धा के साथ स्मरण किया जाता है । वस्तुतः शङ्कराचार्य से पूर्व भी अद्वैत की परम्परा चली आ रही थी ऐसा विद्वानों का मत है । शङ्कराचार्य ने ब्रह्मसूत्र नामक ग्रन्थ के भाष्य में अद्वैतवाद के मुख्य सिद्धान्त ब्रह्म तथा जीव की एकता का प्रतिपादन किया है। शङ्कराचार्य के अनन्तर वाचस्पति मिश्र प्रभृति अनेक आचार्य हुए हैं जिन्होंने अद्वैतवाद के सिद्धान्त को आधार बनाकर विभिन्न ग्रन्थों की रचना कर अद्वैत की परम्परा को सातत्य प्रदान किया । अद्वैतवाद की इस परम्परा में निश्चलदास हुए जिन्होंने 'विचार सागर' नामक ग्रन्थ में अद्वैतवाद के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया ।

निश्चलदास का जन्म समय सम्वत् 1848 के आस-पास का माना जाता है। इनका जन्म हरियाणा के हिसार जिले में भिवानी से आठ कोस उत्तर की ओर धनाणा नामक ग्राम में हुआ[1]। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा दिल्ली तथा जालन्धर में हुई । प्रारम्भिक शिक्षा के अनन्तर शास्त्रों के अध्ययन के लिए ये काशी गए। वहाँ इन्होंने लगभग बीस वर्षों तक षड्दर्शन, वेद तथा वेदांगों का अध्ययन किया।[2] प्रारम्भिक शिक्षा के काल में ही ये दादूसम्प्रदाय के सम्पर्क में आ गए थे अतः सम्पूर्ण जीवन काल में ये दादूसम्प्रदाय के अनुयायी रहे ।

निश्चलदास कृत विचार सागर ग्रन्थ अद्वैतवाद के सिद्धान्तों का प्रबल समर्थक है । प्रकृत ग्रन्थ में अद्वैतवाद के सिद्धान्तों के निरूपण में शास्त्रीय प्रमाणों को आधार बनाया गया है । प्राचीन आचार्यों के मतों को सामान्य जनमानस को उनकी भाषा में सरलता से समझाने (हृदयङ्गम कराने) हेतु यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है । ग्रन्थ की भाषा ब्रज तथा हरियाणवी का मिश्रित रूप हैं। साधु द्वारा रचित तथा जनमानस की भाषा में निबद्ध होने के कारण यह ग्रन्थ अपने आप में विशिष्ट है । जिस प्रकार सागर में तरंग (लहर) होती है उसी प्रकार विचार सागर नामक यह ग्रन्थ तरंगों में निबद्ध है । सात तरंगों में निबद्ध इस ग्रन्थ में 538 पद्य हैं। इन पद्यों को निश्चल दास ने दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया,सोरठा, कुण्डलिया, इन्दव इत्यादि छन्दों में लिखा है । इनकी लेखन शैली पर सधुक्कडी भाषा का पूर्णतया प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

ग्रन्थ को लिखने का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए निश्छलदास कहते हैं-

भरयो वेद सिद्धान्त जल, जामै अति गम्भीर ।

---

1 ग्रन्थकार का परिचय, विचार सागर पृष्ठ– 12.

2 **वही. पृष्ठ-13.**

अस विचार-सागर कहूं, पेखि मुदित है धीर ।।

अर्थात् विचार सागर ग्रन्थ में वेद का सिद्धान्त रूपी निर्मल तथा गहरा जल भरा हुआ है, जिसे स्वयं या गुरुमुख से पढ़कर साधक (धीर) आनन्द का अनुभव करेंगे । अद्ववैतवेदान्त के सिद्धान्तों के व्याख्याभूत विभिन्न ग्रन्थ तथा भाष्य सम्प्रति उपलब्ध हैं, फिर क्यों निश्छलदास द्वारा विचार-सागर लिखा जा रहा है? इसका उत्तर देते हुए कहा गया है- यद्यपि देववाणी अर्थात् संस्कृत भाषा में सूत्र, वार्तिक, भाष्य आदि विभिन्न ग्रन्थ विद्वानों द्वारा रचे गए हैं तथापि मेरे द्वारा यह ग्रन्थ लोकभाषा में लिखा जा रहा हैं क्योंकि साधारण बुद्धि वाले व्यक्तियों के लिए संस्कृत में निबद्ध ग्रन्थों में प्रतिपादित तत्त्वों का अवगाहन सुकर नहीं है । अतः साधारण जनमानस तक ब्रह्मज्ञान को पहुचाँने हेतु यह ग्रन्थ लिखा जा रहा है ।

सूत्र-भाष्य-वार्तिक प्रभृति, ग्रन्थ बहुत सुरवानि।

तथापि मैं भाषा करूं, लखि मति मन्द अजानि।।

यद्यपि हिन्दी भाषा में भी अद्वैत सिद्धान्तों की सरल व्याख्या हेतु विभिन्न ग्रन्थों की रचना की गयी है परन्तु उन ग्रन्थों में पूर्णता का अभाव है । अतः विचार सागर ग्रन्थ को पढ़े बिना आत्म-विषयक संदेह दूर नहीं हो सकता ।

कवि जनकृत भाषा बहुत, ग्रन्थ जगत् विख्यात ।

बिन विचार सागर लखे, नहिं संदेह नशात ।।

अनुबन्ध की आवश्यकता तथा अनुबन्ध के भेदों की संख्या का वर्णन क्रमशः सोरठा तथा दोहा छन्द में वर्णित है । किसी भी ग्रन्थ के अनुबन्ध को जाने बिना कोई भी विचारशील मनुष्य

उसके पठन-पाठन में प्रवृत्त नहीं होता है । अतः इस ग्रन्थ में पाठकों की प्रवृत्ति हेतु अनुबन्ध का वर्णन किया जा रहा है-

अधिकारी सम्बन्ध विषय प्रयोजन मेलि चव।

कहत सुकवि अनुबन्ध, तिनमैं अधिकारी सुनहु ।।

अर्थात् विद्वानों ने अधिकारी सम्बन्ध विषय तथा प्रयोजन इन चारों को अनुबन्ध के अन्तर्गत रखा है । प्रकृत शोध पत्र में विचार सागर में प्रतिपादित अधिकारी का विवेचन किया जा रहा है ।

अधिकारी अर्थात् ग्रन्थ में प्रतिपादित तत्त्वज्ञान हेतु अनिवार्य योग्यताओं का होना । अधिकारी का निरूपण करते हुए ग्रन्थकार कहते हैं-

मूल विक्षेप जाके नहीं, किन्तु एक अज्ञान ।

है चव साधन सहित नर, सो अधिकृत मतिमान ।।

अर्थात् जिसके अन्तःकरण में अज्ञान है परन्तु मल और विक्षेप का लेशमात्र भी नहीं है तथा जो साधन चतुष्टय से सम्पन्न है, वह बुद्धिमान् व्यक्ति इस ग्रन्थ के अध्ययन का अधिकारी है । इसपर व्याख्याकार लिखते हैं- अन्तःकरण में तीन दोष प्रवेश कर जाते हैं मल, विक्षेप और आवरण । मल से अन्तःकरण धुंधला सा हो जाता है, विक्षेप से उसमें सरोवर के समान तरङ्गें उत्पन्न हो जाती है तथा आवरण से वह ढक जाता है,जैसे चमकीली वस्तु पर नीला कपड़ा डाल दिया जाए । निष्काम कर्म से अन्तःकरण की मलिनता दूर होती है। उस पर पड़ा हुआ आवरण रूप अज्ञान का पर्दा छितरा जाता है । उपासना से मन को शान्ति मिलती है ।

अद्वैतवेदान्त के अधिकारी का निरूपण सदानन्द यति ने वेदान्तसार नामक प्रकरण ग्रन्थ में विस्तार से किया है । निश्चलदास ने अधिकारी के वर्णन को नवीन विधि से प्रस्तुत किया है । अधिकारी के निरूपण को एक कथा के माध्यम से वर्णित किया है तथा अधिकारी को उनकी बुद्धि की सामर्थ्य के अनुसार तीन उत्तम, मध्यम तथा कनिष्ठ अधिकारी के रूप में विभाजित किया है । अद्वैतवेदान्त की परम्परा में अधिकारी का ऐसा विवेचन प्राप्त नहीं होता है । अधिकारी के विवेवन को गुरु-शिष्य के संवाद के माध्यम से लिखा गया है । चतुर्थ तरंग में उत्तम अधिकारी का, पंचम तरंग में मध्यम अधिकारी का तथा षष्ठ तरंग में कनिष्ठ अधिकारी का वर्णन किया गया है । तीनों अधिकारियों को नाम भी दिया गया है। उत्तम अधिकारी का नाम तत्त्वदृष्टि, मध्यम अधिकारी का नाम अदृष्टि तथा कनिष्ठ अधिकारी का नाम तर्कदृष्टि था । तीनों ही अधिकारी मोक्ष की कामना से सद्गुरु की खोज में घर छोड़कर चले जाते हैं । गुरु के मिलने पर सर्वप्रथम तत्त्वदृष्टि नामक उत्तम अधिकारी गुरु से विभिन्न प्रश्न पूछता है । तत्त्वदृष्टि नामधेय उत्तमाधिकारी गुरु से निवेदन करता है कि हमें ऐसा उपाय बताइए जिससे हमारा जन्म-मरण रूपी सांसारिक दुःख समाप्त हो सके तथा हम पुनः परमानन्द को प्राप्त कर सकें । गुरु उत्तर देते हैं कि

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

परमानन्द की प्राप्ति तथा जन्म-मरण रूपी दुःख की निवृत्ति की बातें तुम अविद्या के कारण कर रहे हो । तुम्हारी आत्मा स्वयं परमानन्द है, तुममें दुःख का लेशमात्र भी नहीं है । न तुम्हारा जन्म होगा, न ही मृत्यु होगी, तुम तो केवल चेतन ब्रह्म हो-

परमानन्द स्वरुप तू, नहिं तो मैं दुःखलेश ।

अज अविनाशी ब्रह्मचित्, जिन आने हिय क्लेश ।।

शिष्य पुनः प्रश्न करता है कि यदि मैं विशुद्ध आत्मा आनन्दस्वरूप हूँ तो फिर मुझे विषयों के आनन्द की अनुभूति क्यों होती है? आनन्द स्वरूप आत्मा को विषयों में आनन्द की अनुभूति नहीं होनी चाहिए । गुरु कहते हैं जिस मनुष्य की बुद्धि आत्मा से विमुख हो जाती है, उसे ही विषय सुख की इच्छा होती है । इच्छा से उसकी बुद्धि चंचल हो जाती है । इस चंचल बुद्धि में से सुख रूप आभास नष्ट हो जाता है।[3] अभिलषित पदार्थ की प्राप्ति पर मनुष्य की बुद्धि की चंचलता नष्ट हो जाती है, जिससे बुद्धि स्थिर हो जाती और उसमें आनन्द का प्रतिबिम्ब पड़ता है । उसे भ्रान्ति होती है कि उसे सुख मिल रहा है । अतः वह विषय सुख की कामना करता है। अधिक स्पष्टता से शिष्य को समझाने के लिए कहते हैं यदि विषय में ही वास्तविक आनन्द होता तो, सुषुप्ति में भी आनन्द का भान नहीं होना चाहिए क्योंकि समाधि में किसी विषय के साथ मन का सम्बन्ध तो होता ही नहीं है । समाधि एक ऐसी अवस्था है, जिसका सर्वसाधारण को अनुभव नहीं हो सकता, उस समय बुद्धि परमात्मा में लीन हो जाती है । समाधि का अर्थ ही होता है, वह सर्वथा परमात्मा को जाने। तत्त्वदृष्टि के प्रश्नों का उत्तर देते हुए गुरु वेदान्त के विभिन्न सिद्धान्तों

[3] विचारसागर, चतुर्थ तरंग, दोहा 34.

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

का प्रतिपादन करते हैं । यथा- परमानन्द तथा विषयानन्द का वर्णन। पंचविध ख्याति का वर्णन, प्रमाणों का निरुपण, प्रमा का निरूपण इत्यादि।

उत्तमाधिकारी को गुरु द्वारा कहा जाता है कि गुरु मुख से सुने वाक्य तथा वेद वाक्यों से ही अद्वैत ब्रह्म का साक्षात्कार होता है, यह सुनकर मध्यमाधिकारी (अदृष्टि) को संदेह उत्पन्न होता है । वह गुरु से प्रश्न करता है कि गुरु के वाक्यों को वेद तथा सत्य स्वीकार करने पर अद्वैतवाद खण्डित हो जाता है ।यदि गुरु तथा वेद को असत्य स्वीकार करें तो उनके वाक्यों से अद्वैतब्रह्म का ज्ञान नहीं हो सकता तथा इसी कारण मध्वादिक सम्प्रदायों ने शंकर के मत को स्वीकार नहीं किया होगा-

सत्य वेद-गुरू कहैं तु द्वैत भयो, गयो सिद्धान्त अद्वैत ।

यों शङ्कर मत पेखि अशुद्धा, तज्यो सकल मध्वादि प्रबुद्धा ।।

मध्यमाधिकारी की शङ्का का समाधान करते हुए गुरु कहते हैं कि मध्वादि अर्थात् मध्वाचार्य, रामानुज, वल्लभ तथा निम्बार्क इनके सिद्धान्त वेद-विरुद्ध है । केवल शंकर का मत ही प्रामाणिक है।

चारि यार मध्वादिक जे हैं, वेद विरुद्ध कहत सब ते हैं ।

यामैं व्यास वचन सुनि लीजै, शंकर मतहिं प्रमाण करीजै ।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

निश्चलदास ने मध्वादिक का नाम लेकर उनको न पढ़ने की आज्ञा शिष्य को दी है । वस्तुतः शास्त्रीय परम्परा में आचार्यों द्वारा इस प्रकार से किसी का खण्डन उपस्थापित नहीं किया जाता है परन्तु निश्चल दास साधु थे अतः इनकी शैली में यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है ।

पुनः कहते हैं वाल्मीकि कृत योगवाशिष्ठरामायण में वाल्मीकि द्वारा अद्वैत मत के प्रधान विषय दृष्टि-सृष्टिवाद का प्रतिपादन किया गया है, अतः वाल्मीकि मतानुसार अद्वैत मत प्रमाण है तथा वाल्मीकि के वचनों से विरुद्ध मत अप्रामाणिक है -

तिन मुनि कियो ग्रन्थ वाशिष्ठा, तामैं मत अद्वैत स्पष्टा ।

श्रीशङ्कर अद्वैतहि गान्यो, तिनको मत यह हेतु प्रमान्यो ।

वालमीक रिषि वचन विरुद्धं, भेदवाद लखि सकल अशुद्धम् ।।

साथ ही श्रीहर्षकृत खण्डनखण्डखाद्य ग्रन्थ तथा भेदवाद के खण्डनार्थ लिखे गए ग्रन्थ भेदधिक्कार आदि ग्रन्थों के विषय में बताते हैं कि इन ग्रन्थों में भेदवाद का खण्डन तथा अद्वैतवाद का मण्डन किया गया है।[4] अतः मैं भेदवादियों के मतों के खण्डन की युक्तियाँ तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत नहीं कर रहा हूँ । वस्तुतः निश्चलदास ने यहाँ पर यह स्पष्ट किया है कि वे भेदवाद के खण्डन में प्रयुक्त युक्तियाँ ग्रन्थ में वर्णित नहीं कर रहे हैं । भेद की प्रतीति का परिणाम बताते हुए गुरु कहते हैं की भेद की प्रतीति दुःख देने वाली है । यह मनुष्य को यम के कठघरे में धकेल देती है । इसलिए तुम भेदवाद की बुद्धि को त्यागकर अद्वैतवाद से अनुराग करो-

भेद प्रतीति महा दुःख दाता, यम कठमैं यह ठेरन ताता ।

[4] वही, दोहा 11-12.

व चित्त त्यागहु, इक अद्वैत वादै अनुरागहु ।।

जब तक तुम्हारे मन में द्वैत संस्कार बने रहेंगे तब तक अद्वैततत्त्व का साक्षात्कार नहीं हो सकेगा अतः द्वैतवाद सम्बन्धी वचनों को भूल जाओ।[5] निश्चलदास द्वारा कही गई बातें श्रुति आधारित हैं-

"मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति" ।

"द्वितीयाद्वै भयं भवति" ।

शिष्य की द्वैतभावना को विनष्ट करने हेतु गुरु द्वारा भच्छू नामधेय राजा के मंत्री की कहानी कही जाती है तथा स्वप्न के सिद्धान्त के द्वारा जाग्रत पदार्थों का मिथ्यात्व प्रतिपादित किया गया है । इस प्रकार से मध्यम अधिकारी को गुरु द्वारा प्रदत्त उपदेश के रूप में अद्वैतवेदान्त के विभिन्न सिद्धान्तों यथा - पंचीकरण, पंचकोश, जीवनमुक्त, ओङ्कार तथा ब्रह्म के अभेद इत्यादि का विवेचन ग्रन्थकार द्वारा किया गया है।

कुतर्क से दूषित बुद्धि वाले कनिष्ठ अधिकारी को षष्ठ तरंग में उपदेश दिया गया है । अधिकारियों को दिया गया यह उपदेश भी गुरु-शिष्य के संवाद के माध्यम से विवेचित है । कनिष्ठ अधिकारी (तर्कदृष्टि) गुरु से कहता है कि जाग्रत अवस्था में अनुभूत पदार्थों की स्मृति स्वप्न में होती है । अतः स्वप्न के दृष्टान्त के माध्यम से जाग्रत पदार्थों का मिथ्यात्व कहना उचित नहीं है । द्वितीय शंका करते हुए शिष्य कहता है कि स्वप्नावस्था में लिङ्गशरीर स्थूलशरीर को छोडकर बाहर निकलकर पदार्थों को देखता है । अतः स्वप्न भी मिथ्या नहीं है । गुरु शिष्य की शंका दूर करते हुए कहते हैं अनुभव किए हुए पदार्थों का ज्ञान स्मृति कहलाता है । परन्तु स्वप्न में पदार्थों का

[5] वही, दोहा 16.

प्रत्यक्ष होता है।[6] दूसरी शंका का समाधान प्रस्तुत करते हुए गुरु कहते हैं कि यदि लिङ्गशरीर स्थूल शरीर को छोड़कर बाहर निकलकर पदार्थों का प्रत्यक्ष करेगा तो वह स्थूल शरीर मृत तथा अमङ्गल हो जाएगा परन्तु स्वप्नावस्था में ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता है । अतः स्वप्नावस्था में लिङ्गशरीर स्थूलशरीर को छोड़कर बाहर निकलकर पदार्थों का प्रत्यक्ष नहीं करता है

बाहिर लिंग जु नीकसे, देह अमंगल होय ।

प्राण सहित सुन्दर लसै, यातैं लिंग हि जोय ।।

तदनन्तर गुरु तथा शिष्य के संवाद के माध्यम से ग्रन्थकार ने अद्वैतवेदान्त के विभिन्न सिद्धान्तों यथा दृष्टिसृष्टिवाद, ज्ञान तथा उपासना कर्म, सांख्य के मतों का खण्डन, आत्मा की चिद्रूपता, त्रिविधात्मक मंगलाचरण तथा लक्षणा इत्यादि का विवेचन षष्ठ तरंग में किया है ।

इन तीनों प्रकार के अधिकारियों में उत्तम अधिकारी को ही आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है । मध्यम अधिकारी तथा कनिष्ठ अधिकारी को आत्मज्ञान की प्राप्ति हेतु उत्तम अधिकारी अर्थात् तत्त्वदृष्टि बनना पड़ता है । वस्तुतः आत्मज्ञान का यह एक क्रम है । इस प्रकार से निश्चल दास ने तीन प्रकार के अधिकारियों का विवेचन विचार सागर ग्रन्थ में किया है । अधिकारियों के अज्ञान के विनाश के हेतु ग्रन्थकार ने अद्वैतसिद्धान्त के विभिन्न सिद्धान्तों का विवेचन सरलता से किया है । अधिकारी का इस प्रकार का निरूपण ग्रन्थकार की मौलिकता को दर्शाता है । ग्रन्थ की महत्ता इस बात से भी प्रतिपादित होती है कि दक्षिण भारत के महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में

[6] विचारसागर, षष्ठ तरंग, दोहा 4.

वर्तमान समय में भी इस ग्रन्थ का विशिष्ट स्थान है । ग्रन्थ पर कुछ शोधकार्य हो चुके हैं तथा अभी भी विभिन्न प्रकार के शोध कार्य होने की सम्भावना विद्यमान है ।